THE ECONOMIC TIMES

Date:22-07-21

Federalism Upheld, And Cooperation

Invalidation of 97th Amendment brings clarity

ET Editorial

With its verdict overturning a good part of the Constitution (97th Amendment) Act of 2011, the Supreme Court has done two things: one, strengthened the quasi-federal nature of the Indian polity, stopping any abridgement of the rights of the states, and, two, clarified the ambit of the working of the new Union ministry of cooperation. To the extent the court struck down the 97th Amendment based on procedural deficiency, it is still open to the Centre to initiate action to mend that defect and restore the force of the 97th Amendment.

The 97th Amendment to the Constitution, brought in by the UPA government during the days of policy paralysis in 2011-12, made the right to form cooperatives a fundamental right, on par with the right to assemble and form associations, and incorporated a mandate to encourage cooperatives in the chapter on Direct Principles. Further, it added Part IXB to the Constitution, laying down a set of norms for state legislation on cooperatives. It was challenged in the Gujarat High Court and, in 2013, the court rendered the 97th Amendment invalid on the ground that it had not been ratified by at least 50% of state legislatures, a precondition for a constitutional amendment on subjects that figure on the State List. The Supreme Court endorsed this view, in its verdict, and reinforced the judicial defence possible in India's scheme of governance against additional degrees of centralisation of the polity. Of the three judges who heard the case and delivered the verdict, all concurred on the illegality of the amendment with regard to the states' right to formulate laws on cooperatives as they deem fit, rather than as laid down in a legal change made only at the level of Parliament, and two held that the amendment would still hold with regard to multi-state cooperatives, such as Amul, Iffco and Kribhco.

The central government can initiate a process of getting the amendment ratified by at least 15 states, and, in the meantime, focus on multi-state cooperatives. RBI's right to regulate large cooperative banks remains intact.

दैनिक भास्कर

Date:22-07-21

बेहतर देशों ओर भारत के नेतिक आचरण में फर्क क्यों ?

संपादकीय

पेगासस स्पाईवेयर के जरिए लोगों के खिलाफ जासूसी के मामले दुनियाभर के करीब चार दर्जनों देशों में हुए लेकिन इनमें फ्रांस पहला ऐसा देश है, जिसके सरकारी पेरिस प्रॉसिक्यूटर ऑफिस ने जांच शुरू की है। इसी देश के वित्तीय प्रॉसिक्यूटर ने भारत के साथ की गई

59,000 करोड़ रुपए की राफेल डील में भी घपले की जांच के लिए एक जज को नियुक्त किया है। इधर भारत में पेगासस जासूसी मुद्दे पर सरकार की नीयत पर सवाल पूछने पर देश के प्रधानमंत्री से लेकर मंत्री और इसी पार्टी के तमाम मुख्यमंत्री तक, सभी एक साथ कहते हैं, "विदेशी ताकतों से मिलकर भारत की छवि बिगाड़ने की कोशिश की जा रही है'। पचास साल पहले अमेरिका में ऐसे ही वाटरगेट कांड में निक्सन को इस्तीफा देना पड़ा। लेकिन भारत में सरकार जांच तो दूर, आरोप को ही राष्ट्र के खिलाफ साजिश बता रही है, हालांकि आरोप यह है कि इसका प्रयोग कर्नाटक में विपक्ष की सरकार गिराने में भी हुआ। भारत में सरकारी नीति के विरोध को 'देश के खिलाफ साजिश' बताकर सरकार और राष्ट्र को समतुल्य रख दिया जाता है। उधर पिछले एक दशक में फ्रांस के दो राष्ट्रपतियों को भ्रष्टाचार में सजा दी जा चुकी है, जबकि उनमें से एक ने तो अपने देश को आर्थिक संकट से निकालने में बेहद महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। ब्राजील के वर्तमान राष्ट्रपति के खिलाफ वहां की सुप्रीम कोर्ट ने भारत से खरीदी गई वैक्सीन में भ्रष्टाचार में जांच के आदेश दिए हैं। ब्राजील प्रति-व्यक्ति आय और मानव विकास में भारत से क्रमशः 46 और 47 पायदान ऊपर है। इससे सबाल उठता है कि कहीं सत्ता की नैतिकता और विकास का कोई रिश्ता तो नहीं है ?

Date:22-07-21

पेगासस जासूसी साइबर आतंकवाद का मामला

विराग गुप्ता, (सुप्रीम कोर्ट के वकील)

दो साल पुराने पेगासस जासूसी मामले में संसद सत्र के पहले नया खुलासा भले ही गलत राजनीतिक मंशा से किया गया हो, लेकिन इससे अपराध की गंभीरता कम नहीं होती। इसकी पूरी क्रोनोलॉजी समझें तो सरकार के साथ पूरा सिस्टम ही कटघरे में खड़ा दिखता है। सीआईए के इशारे पर डिजिटल कंपनियों द्वारा चलाए गए ऑपरेशन प्रिज्म से भारत समेत कई देशों की जासूसी को सन 2013 में स्नोडेन ने उजागर किया था। भारत की कांग्रेस सरकार समेत अन्य देशों ने जासूसी के अंतर्राष्ट्रीय मामले में अपराधियों को दंडित नहीं किया। इससे गुनाहगारों का हौसला बुलंद होने के साथ, साइबर जासूसी के अंतर्राष्ट्रीय बाजार का आगाज़ हुआ। इजरायली कंपनी एनएसओ ने पेगासस नाम से ऐसा साइबर ब्रह्मास्त्र विकसित कर दिया, जिसके कारनामों ने पूरी दुनिया में तहलका मचा रखा है। एनएसओ का दावा है कि आतंकवाद के खिलाफ लड़ाई के लिए सिर्फ सरकारी एजेंसियों, पुलिस व सेना को ही पेगासस देती है। भारत सरकार ने पेगासस के इस्तेमाल से मनाही नहीं की है। इसलिए यह मानना तार्किक है कि सरकारी एजेंसियों ने पेगासस इस्तेमाल किया। तीन दशक पहले विपक्षी नेता राजीव गांधी के घर पर पुलिस के दो जवानों की निगरानी के मुद्दे पर चंद्रशेखर सरकार गिर गई। उसके पहले 1988 में टेलीफोन टेपिंग के मामले पर कर्नाटक में हेगड़े की सरकार गिरी। पुराने किस्सों के अंजाम देखते हुए, पेगासस की सरकारी खरीद या वैध इस्तेमाल के तीखे सवाल पर मंत्रियों और प्रवक्ताओं ने होंठ सी रखे हैं।

सन 1885 के जिस क़ानून के दम पर टेलीफोन टेपिंग के सरकारी हक़ की बात हो रही है, वह गुजरे जमाने की बात है। मोबाइल में सेंध लगाने का अधिकार हासिल करने के लिए गृह मंत्रालय ने 20 दिसंबर 2018 को आदेश पारित किया था। इसके तहत भारत सरकार की 9 खुफिया एजेंसियों और दिल्ली पुलिस को इंटरनेट व मोबाइल में जासूसी और सेंधमारी की कानूनी इजाजत मिल गई। दो साल पहले वॉट्सएप ने अमेरिका के कैलिफोर्निया की जिला अदालत में एनएसओ के खिलाफ मुकदमा दायर किया, जिसके बाद भारत में इस मामले पर ट्विटरबाजी शुरू हो गई। पेगासस जासूसी मामले पर चिंता जाहिर करते हुए तत्कालीन आईटी मंत्री रविशंकर प्रसाद ने 31 अक्टूबर 2019 को ट्वीट करके वॉट्सएप से जानकारी मांगी थी। पेगासस के खिलाफ विदेश में चल रही कानूनी लड़ाई में वॉट्सएप के

साथ फेसबुक, गूगल और माइक्रोसॉफ्ट भी शामिल हैं। लेकिन डिजिटल के सबसे बड़े बाज़ार भारत की सरकार, संसद और सुप्रीम कोर्ट, पेगासस के मुद्दे पर ट्राजन हॉर्स सिंड्रोम का शिकार दिखते हैं।

चीनी एप्स बैन करने वाली मजबूत सरकार, 2019 में पेगासस के खुलासे के बाद चुप्पी साध गई। फिर संघ के पूर्व प्रचारक केएन गोविंदाचार्य ने अमेरिकी अदालत में चल रही कार्रवाई का विवरण देते हुए सरकार से वॉट्सएप, एनएसओ व सभी गुनाहगारों के खिलाफ ठोस कार्रवाई की मांग की। सरकार से कोई कार्रवाई नहीं होने पर, गोविंदाचार्य ने सुप्रीम कोर्ट का दरवाजा खटखटाया। छोटे-छोटे मामलों का स्वतः संज्ञान लेने वाली सर्वोच्च अदालत ने राष्ट्रीय महत्व के इस मामले को सुनवाई के लायक भी नहीं समझा। पेगासस जासूसी कांड में तत्कालीन जजों और उनके स्टाफ का नाम भी उछल रहा है। इस मामले की न्यायिक जांच की बात भी हो रही है। लेकिन पेगासस के सांहारिक मार से बेपरवाह जज अदालती मामलों में वॉट्सएप जैसे खतरनाक ऐप का धड़ल्ले से इस्तेमाल कर रहे हैं। सरकार और सुप्रीम कोर्ट से निराशा मिलने के बाद, गोविंदाचार्य ने आईटी मंत्रालय की संसदीय समिति के दरवाजे पर दस्तक दी। कांग्रेसी सांसद शशि थरूर की अध्यक्षता वाली समिति में सभी पार्टियों के सांसद हैं। 14 नवंबर 2019 को दिए गए लिखित प्रतिवेदन और उसके बाद व्यक्तिगत स्तर पर विस्तृत प्रेजेंटेशन के बावजूद संसदीय समिति ने भी इस मामले पर चुप्पी साध ली। अब दो साल बाद दूसरे राउंड के खुलासे के बाद, संसदीय समिति की बैठक 28 जुलाई को फिर से बुलाने की खबर है। सुप्रीम कोर्ट के नौ जजों ने प्राइवेसी के हक पर ऐतिहासिक फैसला दिया था, लेकिन चार सालों से उस पर कानून नहीं बना। इस मामले पर विचार के लिए एक नई संयुक्त संसदीय समिति बनाई गई थी। उस समिति के पांच सांसदों को नए मंत्रिमंडल में मंत्री बना दिया गया, जिसके बाद डेटा सुरक्षा कानून के प्रारूप और भविष्य पर संकट के बादल और ज्यादा गहरा गए हैं।

मोबाइल फ़ोन की जासूसी, लोगों के जीवन के अधिकार से खेलने सरीखा है। सरकार, संसद और सुप्रीम कोर्ट समेत अधिकांश संस्थाएं पेगासस मामले में अपनी संवैधानिक भूमिका के निर्वहन में विफल रहे। लेकिन देश की एकता और अखंडता के इस मामले में ठोस कार्रवाई जरूरी है।

Date:22-07-21

निगरानी लोकतंत्र को दीमक की तरह खोखला कर देती है

रीतिका खेड़ा , (अर्थशास्त्री, दिल्ली आईआईटी में पढ़ाती हैं)

इजरायल की एक निजी कंपनी, एनएसओ, ने पेगासस नामक हैकिंग सॉफ्टवेयर बनाया है, जिसे वह केवल अन्य देश की सरकारों को बेचती है (निजी कंपनी या व्यक्ति को नहीं)। यह सॉफ्टवेयर आपके जाने बिना, आपके फोन से 24 घंटे जानकारी भेजता रहता है। फोन से कॉन्टैक्ट, फोटो, मैसेज, इत्यादि सरकारी एजेंसी से साझा होते रहते हैं, जब तक वह फोन आप इस्तेमाल करेंगे। यह सॉफ्टवेर फोन के हार्डवेयर को प्रभावित करता है, न कि फोन में डाले गए ऐप को।

ज्यादातर हैकिंग के मामलों में जिस व्यक्ति का फोन टारगेट होता है, वह भूल से ही सही, किसी के द्वारा भेजी गई लिंक या मैसेज पर क्लिक कर देता है। पेगासस फोन को बिना इस सबके भी संक्रमित कर सकता है।

जबसे इस कांड की जानकारी आई है, किसका फोन प्रभावित हुआ, यह चर्चा का महत्वपूर्ण बिंदु रहा है। पेगासस बनाने वाली कंपनी का कहना है कि वह सॉफ्टवेर सरकारी ग्राहकों को देती है और वह भी केवल जुर्म और आतंक के खिलाफ इस्तेमाल के लिए। लेकिन भारत में पक्ष-विपक्ष, सरकारी अधिकारी, मीडिया, मानव अधिकार पर काम करने वाले लोगों के नाम शामिल हैं। वास्तव में जब कंपनी माल बेच देती है, उसके बाद उसका इसपर अख्तियार नहीं कि ग्राहक उसे किस तरह इस्तेमाल करता है।

कई लोगों का कहना है, किसी का फोन इस तरह से हैक करने में दिक्कत क्या है? ज़रूर उनके पास कुछ छिपाने लायक बात होगी, वरना उन्हें ऐतराज़ क्यों होता? यह कुतर्क है। क्या आप अपने ईमेल का पासवर्ड सबको बताते हैं? यदि नहीं, तो क्या आप कुछ छिपाने लायक काम करते हैं? ज़िंदगी के हर दायरे में हम तय करते हैं कि किसके साथ, क्या साझा करेंगे। यह बदलता भी रहता है। आज अपने काम के बारे में किसी सहकर्मी से शेयर करते हैं, कल उसका पद बदलने पर शायद न करना चाहें।

मूल बात यह है कि किसे क्या बताना है, इस पर नियंत्रण आपके हाथों में है। इस नियंत्रण के अपने हाथों से निकल जाने पर हम बेबस, लाचार हो जाते हैं। और हैकिंग सॉफ्टवेयर के अटैक से यही सबसे बड़ी दिक्कत है। आपकी बातें, आपके फोटो, किस दिन, किस से कितनी बात की, यह सब आपकी अनुमति के बगैर, आपकी जानकारी के बगैर, किसी सरकार की एजेंसी के लोगों तक पहुंच जाती है। एक तरह से आप खुद को नग्न महसूस करते हैं, जिससे आपकी गरिमा का भी सवाल उठता है।

सार्वजनिक ज़िंदगी बिताने वाले, चाहे नेता हो या पत्रकार, जज या चुनाव आयोग के कमिशनर, सभी लोगों के प्रति जवाबदेह हैं। लेकिन जवाबदेही के लिए पारदर्शिता चाहिए। हैकिंग निगरानी का यंत्र है, पारदर्शिता नहीं। जब उनका फोन हैक होता है, तो उनकी निजी ज़िंदगी की जानकारी का, उन्हें काबू में रखने में इस्तेमाल हो सकता है। मसलन, यदि किसी सरकारी मुलाज़िम या पत्रकार को होम लोन की ज़रूरत है और हैकर (इस किस्से में सरकार हैकर है) को यह जानकारी मिल जाए तो वह इसके आधार पर उन्हें मदद देने का वादा करके, अपने पक्ष में खबर करवा सकते हैं, निर्णय दिलवा सकते हैं। यदि आपने दोस्त से, बॉस की बुराई की हो, तो इस जानकारी को आपके खिलाफ इस्तेमाल किया जा सकता है।

पेगासस कांड की वजह से यह चर्चा हो रही है। लेकिन इसके अलावा निगरानी के कई यंत्र है। गूगल, वॉट्सएप, फ़ेसबुक, यह सब गुप्त तरीके से हमारी जानकारी प्राप्त करते हैं, इससे मुनाफ़ा कमाते हैं (आपकी पसंद-नापसंद के आधार पर विज्ञापन दिखाकर) और कभी-कभी आपकी जानकारी सरकार के साथ साझा करते हैं। सबसे भयावह बात यह है कि निजी कंपनियों का मुनाफ़ा नागरिकता और लोकतंत्र को कमज़ोर करने से कमाया जा रहा है।

जवाबदेही सुनिश्चित करने के लिए स्वतंत्र सोच और काम अहम है। ऐसी निगरानी से यह बुरी तरह प्रभावित होते हैं। निगरानी से शासन-अनुशासन, प्रजा-नागरिक, जवाबदेही-गुलामी की रेखा मिटने लगेगी। जवाबदेही लोकतंत्र को मज़बूत बनाती है और निगरानी दीमक की तरह खोखला कर देती है।

Date:22-07-21

जलवायु परिवर्तन के कारण बढ़ रहीं बिजली गिरने की घटनाएं

आरती खोसला

पिछले दिनों राजस्थान, उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश में आकाशीय बिजली गिरने से कम से कम 74 लोगों की मौत हो गई। आकाशीय बिजली वास्तव में मनुष्यों के लिए सबसे घातक प्राकृतिक घटना है। मौसम विज्ञानियों के अनुसार, इसे पृथ्वी पर सबसे पुरानी देखी गई प्राकृतिक घटनाओं में से एक माना जाता है। नेशनल क्राइम रिकार्ड्स ब्यूरो की रिपोर्ट के अनुसार, भारत में आकाशीय बिजली गिरने से 2,500 मौतें हुई हैं।

दरअसल थंडरक्लॉउड्स (या गर्जनकारी बादल) के पास लाखों बोल्ट का विद्युत चार्ज होता है और बादल के भीतर ही अलग पोलेरिटी (ध्रुवता) होती हैं। विकास के प्रारंभिक चरणों में, बादल और जमीन के बीच और बादल में पॉजिटिव तथा नेगेटिव चार्ज के बीच, हवा एक इंसुलेटर के रूप में काम करती है। जब विपरीत चार्ज पर्याप्त रूप से बढ़ जाता हैं, तो हवा की इंसुलेट करने की क्षमता टूट जाती है और बिजली तेजी से डिस्चार्ज होती जिसे हम आकाशीय बिजली के रूप में जानते हैं। बिजली को जितने कम इंसुलेशन से गुजरना पड़ता है, उसके लिए गिरना उतना ही आसान हो जाता है। पूर्व-मानसून मौसम में तेज आंधी के गठन के लिए वायुमंडलीय परिस्थितियां काफी अनुकूल होती हैं। संवेदनशील मौसम की पॉकेट्स होती हैं जो इन तूफानों की क्रूरता बढ़ाती हैं। बिहार, झारखंड, ओडिशा और उत्तर भारत के सिंधु-गंगा के मैदानों सहित राजस्थान और उत्तर प्रदेश घातक बिजली गिरने की चपेट में हैं।

हाल के वर्षों में प्राकृतिक खतरों से होने वाले नुकसान में वृद्धि दिखी है। जलवायु परिवर्तन से ऐसी घटनाएं और खतरनाक होने की आशंका है। इससे अधिक चिंता की बात यह है कि वैश्विक तापमान में वृद्धि के कारण आंधी-तूफ़ान (थंडरस्टॉर्म), धूल भरी आंधियों और आकाशीय बिजली की तीव्रता व आवृत्ति दोनों बढ़ने की आशंका है।

देश के विभिन्न भागों में वर्षभर आंधी-तूफान आते हैं। पर गर्मी के महीनों में उनकी आवृत्ति और तीव्रता अधिकतम होती हैः मार्च से जून, जिसे देश में प्री-मानसून सीजन भी कह सकते हैं। इसका कारण है कि थंडरस्टॉमों का सबसे महत्वपूर्ण कारक सतह के स्तर पर वातावरण का तीव्र ताप है और गर्मी के महीनों के दौरान भूमि द्रव्यमान अधिकतम तपता है।

भारत आमतौर पर इस दौरान बड़े पैमाने पर बिजली गिरते हुए देखता है। हालांकि, इस साल मानसून के उत्तर पश्चिम भारत में आगे ना बढ़ने से और न्यूनतम 10 दिनों की देरी के साथ, बारिश की अनुपस्थिति ने सतह के गर्म होने का रास्ता बनाया है। अब मानसून के आने के साथ, आद्रता में वृद्धि से थंडरक्लॉउड्स का विकास हुआ और बर्फ के कणों के टकराने से चार्जिंग हुई और बिजली गिरने लगी।

हम प्री 2 सीजन में अधिक थंडरक्लॉउड्स का विकास देखते हैं, जिनमें बहुत ऊर्जा होती है। साथ ही, हवाओं के परिवर्तन और उच्च तापमान के कारण वातावरण में बहुत अस्थिरता है। यह काफी स्पष्ट है कि जलबायु परिवर्तन के कारण बिजली गिरने की घटनाएं बढ़ी हैं। 1967 से 2012 तक, भारत में प्राकृतिक आपदाओं के परिणामस्वरूप होने वाली मौतों में से लभभग 39% आकाशीय बिजली गिरने से हुईं। वर्ष 2013, 2014 और 2015 में, भारत में आकाशीय बिजली गिरने से क्रमशः 2833, 2582 और 2641 लोगों की जान गई। मई 2018 में, भारत के कई हिस्सों में भयंकर डस्टस्टॉर्म्स, थंडरस्टॉर्म्स और आकाशीय बिजली गिरने के परिणामस्वरूप राजस्थान, उत्तर प्रदेश, तेलंगाना, उत्तराखंड और पंजाब में बड़ी संख्या में मौतें हुए और लोग घायल हुए।

जनसत्ता

Date:22-07-21

अंतरिक्ष पर्यटन के खुलते रास्ते

अभिषेक कुमार सिंह

मानव सभ्यता के दो बड़े सपने- अंतरिक्ष को छूना और चंद्रमा पर पदार्पण- पिछली सदी के साठ के दशक में पूरे हो गए थे। रूसी अंतरिक्ष विज्ञानी यूरी गागरिन पहले ऐसे व्यक्ति थे, जिन्होंने 1961 में धरती से ऊपर अंतरिक्ष कही जाने वाली सरहद को छुआ था। अमेरिकी अंतरिक्ष यात्रियों ने अपोलो-11 यान के जरिए चंद्रमा पर 1969 में पदार्पण कर इतिहास रच दिया था। इस बीच अंतरराष्ट्रीय स्पेस स्टेशन- आईएसएस के निर्माण, अमेरिकी अंतरिक्ष यानों (कोलंबिया, चैलेंजर आदि) की यात्राएं और मंगल पर मानव रहित यानों के पहुंचने जैसी कई नई विस्मयकारी घटनाएं हो चुकी हैं, लेकिन इन सभी घटनाओं में आम जनता का सीधा जुड़ाव नहीं रहा। मगर इक्कीसवीं सदी की शुरुआत के साथ यह सपना भी पूरा होने लगा। अब अगर किसी के पास थोड़ा पैसा हो, तो वह निजी तौर पर अंतरिक्ष में भ्रमण का अपना शौक पूरा कर सकता है।

हाल में, 20 जुलाई 2021 को, दुनिया के मशहूर कारोबारी और अमेजन के संस्थापक जेफ बेजोस अपनी अंतरिक्ष कंपनी ब्लू ओरिजन के यान से अंतरिक्ष को छूकर लौट आए। वह अपने साथ बयासी वर्षीय एक शख्स और अठारह वर्षीय एक युवा को भी इस यात्रा पर ले गए। इससे उन्होंने यह संदेश देने की कोशिश की कि अंतरिक्ष की सैर करना अब सच में बच्चों का खेल है। करीब डेढ़ हफ्ते के अंदर अंतरिक्ष को निजी तौर पर छूकर कामयाबी से लौट आने की यह दूसरी घटना थी। इससे पहले 11 जुलाई, 2021 को एयरलाइंस कारोबार चलाने वाले दुनिया के एक प्रमुख व्यवसायी रिचर्ड ब्रैनसन ने अंतरिक्ष पर्यटन साकार करने में जुटी अपनी कंपनी वर्जिन गैलेक्टिक के यान वीएमएम ईव से उड़ान भरी थी। यह यान उन्हें कंपनी के पांच कर्मचारियों (जिनमें से एक भारतीय मूल की महिला शिरीषा बांदला भी शामिल थीं) के साथ न्यू मैक्सिको, अमेरिका के ऊपर आकाश में करीब अस्सी किलोमीटर ऊंचाई तक ले गया था। इसके बाद उनकी धरती पर आम विमान की तरह ही सफल वापसी भी हुई। चौंतीस साल की एयरोनॉटिकल इंजीनियर शिरीषा, कल्पना चावला के बाद भारत में जन्मी दूसरी ऐसी महिला हैं, जिन्होंने अंतरिक्ष छुआ है।

दावा है कि जेफ बेजोस सच में अंतरिक्ष छूकर आए हैं, क्योंकि उनसे पहले ब्रैनसन का यान जिस ऊंचाई तक गया, उसे अंतरिक्ष कहने को लेकर विवाद है। अस्सी किलोमीटर की ऊंचाई पर पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण खत्म हो जाता है, भारहीनता का अनुभव होता है और इस ऊंचाई पर सामान्य विमान उड़ान नहीं भर पाते हैं। यही वजह है कि रिचर्ड ब्रैनसन की यात्रा पर जेफ बेजोस ने उन्हें बधाई देने के साथ यह तंज भी कसा था कि असली अंतरिक्ष यात्रा पर वे स्वयं जाएंगे। असल में जेफ बेजोस ने योजना बनाई थी कि उनका यान पृथ्वी की सतह के सौ किलोमीटर ऊपर उस केरमन लाइन को पार करे, जिसे अंतरिक्ष की प्रारंभिक परिधि के रूप में ज्यादा मान्यता हासिल है। बहरहाल, अब एक अन्य चर्चित कारोबारी एलन मस्क भी सितंबर से अंतरिक्ष पर्यटन के निजी अभियान शुरू करने की तैयारियों में लगे हुए हैं। इन सारे अभियानों के मद्देनजर कहा जा सकता है कि अगले ही कुछ समय में हम सैकड़ों लोगों को अंतरिक्ष की सैर पर जाते देख सकेंगे। इस बारे में एक दावा ब्रैनसन की कंपनी वर्जिन गैलेक्टिक का है। इस कंपनी का कहना है कि अगले दो अन्य परीक्षणों के बाद 2022 से वह उन छह सौ अमीरों की अंतरिक्ष यात्रा का अभियान शुरू कर देगी, जिन्होंने प्रति सीट ढाई लाख अमेरिकी डॉलर चुका कर अपनी बुकिंग पहले से करवा रखी है। दुनिया में अरबपति अमीरों की ऐसी लंबी सूची तैयार बताई जा रही है, जो आने वाले वक्त में अंतरिक्ष कही जाने वाली सरहद को छूकर लौटना चाहते हैं।

हालांकि यह उपलब्धि काफी पहले हासिल की जा चुकी है। अंतर सिर्फ यह है कि अभी तक ऐसी सभी यात्राएं सरकारी अंतरिक्ष एजेंसियों के माध्यम से संपन्न हुई हैं। बीस साल पहले अमेरिकी पूंजीपति डेनिस टीटो को रूस ने अपने सोयूज रॉकेट से 30 अप्रैल, 2001 को इंटरनेशनल स्पेस स्टेशन भेजा था। इस तरह डेनिस टीटो दुनिया के पहले ऐसे व्यक्ति बने थे, जिन्होंने पैसे खर्च करके अंतरिक्ष की यात्रा की थी। उनके बाद कई अन्य लोगों ने अंतरिक्ष की सैर के अपने सपने को ढेर सारी रकम खर्च कर साकार किया था। इस सूची में दक्षिण अफ्रीका के मार्क शटलवर्थ (25 अप्रैल 2002), अमेरिका के ग्रेग ओल्सन (1 अक्तूबर, 2005), ईरान की अनुशेह अंसारी (18 सितंबर, 2006) और सॉफ्टवेयर आर्किटेक्ट चार्ल्स सिमोन (7 अप्रैल, 2007) के नाम शामिल हैं, जिन्होंने धरती का वायुमंडल पार कर अंतरिक्ष के नजारे लिए थे और वहां पहुंच कर अपनी सुंदर पृथ्वी को निहारा था। हालांकि ये पहले के सारे अभियान सरकारी अंतरिक्ष एजेंसियों के सहारे हुए थे। यह भी उल्लेखनीय है कि सरकारी एजेंसियों की मदद से जो लोग अंतरिक्ष में गए, वे किसी न किसी रूप में विमानन क्षमता से लैस थे। अंतरिक्ष पर्यटन की असली शुरुआत तब मानी जा सकती है, जब निजी तौर पर ऐसे आम लोग पैसे खर्च करके जब चाहें निजी कंपनियों की मदद से अंतरिक्ष की सैर को जा सकें।

अंतरिक्ष पर्यटन की कल्पना को निजी तौर पर साकार करने का काम मोटे तौर पर 1995 में शुरू हुआ था, जब कुछ उद्योगपतियों ने इस बारे में एक प्रतियोगिता आरंभ की थी। दस लाख डॉलर की इनामी राशि वाले 'अंसारी एक्स प्राइज' को जीतने के लिए दुनिया भर की छब्बीस टीमों ने प्रतियोगिता में हिस्सा लिया था। इन टीमों को दुबारा इस्तेमाल होने वाला एक ऐसा यान बनाना था, जिसमें तीन यात्रियों को धरती से एक सौ दस किलोमीटर ऊपर अंतरिक्ष की सैर पर ले जाया जा सके। यह प्रतियोगिता 'मोजावे एयरोस्पेस वेंचर्स'

ने जीती थी। इस टीम ने 'स्पेसशिप वन' और इसे अंतरिक्ष में पहुंचाने वाला रॉकेट 'वाइट नाइट' बनाया। प्रतियोगिता की सारी शर्तें पूरी करते हुए स्पेसशिप-वन को 4 अक्तूबर, 2004 को अंसारी एक्स प्राइज का विजेता घोषित किया गया। इसके बाद वर्ष 2015 में अमेरिकी स्पेस एजेंसी नासा ने अंतरिक्ष यानों के दौर के बाद अपने एक यान 'ओरियान' का प्रक्षेपण एलन मस्क की निजी स्पेस कंपनी 'स्पेसएक्स' की मदद से किया था। दिसंबर, 2015 में 'स्पेसएक्स' ने अमेरिका के कैप कनेवरल एयरफोर्स स्टेशन से फाल्कन-9 नाम के रॉकेट से ग्यारह उपग्रह एक साथ छोड़े थे। फाल्कन-9 ने न केवल सभी उपग्रहों को पृथ्वी से दो सौ किलोमीटर ऊपर उनकी कक्षा में सही-सलामत छोड़ा, बल्कि धरती पर सुरक्षित वापसी भी की। इसी कंपनी ने 10 अप्रैल, 2016 में फाल्कन-9 को एक बार फिर ड्रैगन कार्गो यान को अंतरराष्ट्रीय स्पेस स्टेशन तक पहुंचाने के लिए छोड़ा। फाल्कन-9 इस बार भी सफल रहा। उसने ड्रैगन कार्गो यान को अंतरिक्ष में पहुंचाने के बाद अटलांटिक महासागर पर बने लैंडिंग प्लेटफार्म पर सुरक्षित वापसी की। उल्लेखनीय है कि फाल्कन-9 ने जमीन पर सीधी (वर्टिकल) लैंडिंग की, यानी इसे उतरने के लिए किसी रनवे की जरूरत नहीं। इसे किसी भी तल पर उतारा जा सकेगा। इससे यह भी साबित हुआ कि फाल्कन-9 का बार-बार इस्तेमाल हो सकता है।

अब इस यात्रा का आनंद लेने वाले अमीरों की दुनिया में कमी नहीं है। पर प्रश्न है कि आखिर निजी कंपनियां इस काम में इतनी रुचि क्यों ले रही हैं। इसका जवाब है अंतरिक्ष पर्यटन से होने वाली कमाई। स्विट्जरलैंड के एक बैंक यूबीएस का अनुमान है कि 2030 तक अंतरिक्ष पर्यटन का बाजार तीन अरब डॉलर यानी दो खरब रुपए से भी ज्यादा का हो जाएगा।

राष्ट्रीय सहारा

Date:22-07-21

खतरे की शुरुआत

नवल किशोर कुमार, (लेखक फारवर्ड प्रेस, नई दिल्ली के हिंदी संपादक हैं)

ईजरायली कंपनी एनएसओ ग्रुप टेक्नोलॉजीज बहुत पुरानी कंपनी नहीं है। वर्ष 2010 में इसकी स्थापना तीन इजरायली उद्यमियों ने की थी। इनके नाम हैं–निव कार्मी,स्हाले हुल्यो और ऑमरी लेवी। कंपनी का नाम भी इन तीनों ने अपने–अपने नाम के पहले अक्षर के आधार पर रखा। यह कंपनी मूल रूप से डाटा संबंधी सूचनाओं का व्यवसाय करती है। वर्तमान में यह कंपनी अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सुर्खियों में है। भारत में इसकी चर्चा इसलिए है कि इसके संबंध में भारत सरकार पर गंभीर आरोप लग रहे हैं। एक तो यह कि सरकार ने अपने ही देश के नागरिकों की जासूसी का ठेका विदेशी संस्थान को दिया। इससे भी बड़ा आरोप यह कि सरकार ने ऐसा करके लोकतंत्र पर गहरा आघात किया है।

यह पूरा प्रकरण ट्विटर और भारत सरकार के बीच चल रही खींचतान के दौरान सामने आया है। ट्विटर के बहाने सूचनाओं के व्यवसाय में शामिल विदेशी कंपनियों के पर कतरने की भारत सरकार की कोशिशों को पैगासस ने नाकाम कर दिया है। हुआ यह है कि सरकार स्वयं ही कठघरे में खड़ी हो गई है। वजह यह कि वह ट्विटर पर उपभोक्ताओं की निजता का हनन करने तथा उनकी सूचनाओं के दुरुपयोग का आरोप लगा रही थी।

हालांकि अपने बचाव में बैकफुट पर आई नरेन्द्र मोदी सरकार ने कहा है कि इस पूरे प्रकरण का उससे कोई वास्ता नहीं है। यहां तक कि सरकार रिपोर्ट को संदेहास्पद बताने का प्रयास कर रही है, और उसके मुताबिक यह एक साजिश का हिस्सा ही है कि मानसून सत्र की शुरुआत के एक दिन पहले ही यह मामला प्रकाश में लाया गया। अपनी इसी दलील को लोगों तक पहुंचाने के लिए भाजपा के नेताओं ने लगभग हर राज्य में संवाददाता सम्मेलन किए। वहीं सत्ता पक्ष के नेता, जो पैगासस की रडार में रहे, की स्थिति तो अजीबोगरीब हो गई है। वे न तो ढंग से सरकार का बचाव कर पा रहे हैं, और ना ही विरोध। मसलन, स्मृति इरानी केंद्रीय मंत्रिपरिषद की सदस्य हैं। यह माना भी जाता रहा है कि उन्हें नरेन्द्र मोदी का वरदहस्त हासिल रहा है। उनकी जासूसी के पीछे सरकार की मंशा क्य रही होगी, यह सवाल सभी भारतीयों के जेहन में है? क्या वह भी नरेन्द्र मोदी सरकार के खिलाफ किसी तरह की साजिश में संलिप्त थीं?

खैर, यह समझना जटिल नहीं है कि सरकार बैकफुट पर क्यों है। सवाल यह भी नहीं है कि सरकार ने जासूसी करवाई है अथवा नहीं। राजनीति में कई सारे सवाल स्वयं में जवाब होते हैं। इसके उदाहरणों से भारतीय राजनीति का इतिहास भरा पड़ा है। असल सवाल यह है कि भारतीय नेताओं, जजों, सामाजिक कार्यकर्ताओं और पत्रकारों से जुड़ी महत्वपूण सूचनाएं हासिल करने का अधिकार विदेशी संस्थाओं को क्यों दिया गया? यह बात इसलिए भी महत्वपूण है कि भारत के प्रधानमंत्री जब अपने पद की शपथ लेते हैं, तो गोपनीयता की कसम भी खाते हैं।

दरअसल, राजनीति में लोकलाज का बड़ा महत्व है। मतलब यह कि सत्ता के लिए प्रतिस्पर्धा कोई नई बात नहीं रही है। सामान्य तौर पर हर पांच साल पर चुनाव का प्रावधान है। सत्ता में काबिज पार्टियां नया जनादेश प्राप्त करने के लिए चुनाव मैदान में उतरती हैं, और विपक्षी पार्टियां सरकार की कमियों को उजागर करके और बेहतर शासन–प्रशासन का वादा कर जनादेश पाने का प्रयास करती हैं। सियासत में जोड़–तोड़ का स्पेस भी बना रहता है। लेकिन इन सबके केंद्र में लोकलाज महत्वपूण होती है। विश्व स्तर पर भारतीय लोकतंत्र को आदर्श लोकतंत्र इसलिए भी माना जाता रहा है कि इसने अपने आपको साबित किया है। भारतीय लोकतंत्र ने 1974 में आपातकाल को भी देखा लेकिन तब भी लोकलाज का बड़ा असर था। वह लोकलाज ही थी जिसके कारण इंदिरा गांधी को आपातकाल वापस लेना पड़ा था।

परंतु, मौजूदा दौर में सियासत की प्रकृति बदली है। पैगासस से जुड़े मामलों ने तो आम भारतीय के विश्वास को झकझोर कर रख दिया है। अब यह बात सभी के जेहन में है कि देश में कोई भी ऐसा नहीं है जिसकी निजता का हनन नहीं हो रहा। फिर इस बात का भी कोई भरोसा नहीं कि जिस व्यक्ति के कहने पर इजरायली कंपनी दूसरों की जासूसी कर रही हो, वह उस व्यक्ति अथवा संस्थान की जासूसी नहीं कर रही होगी। कहने का मतलब यह कि इस पूरे मामले को विस्तार से देखें तो वास्तविक खतरा नजर आता है।

वर्तमान में अंतरराष्ट्रीय मंचों पर भारत की स्थिति कूटनीतिक रूप से कमजोर हुई है। चीन के साथ रिश्ते दिन–ब–दिन विषम हो रहे हैं। वहीं अमेरिका के साथ रिश्ते में भी पहले वाली गरमाहट नहीं रही है। रूस भी अब भारत को अपना विश्वासपात्र नहीं मानता। ब्रिटेन और फ्रांस जैसे देशों, जो कभी भारत को इज्जत की नजर से देखते थे, की भी आज द्रष्टि बदल गई है। पड़ोसी देशों की बात करें तो पाकिस्तान और बांग्लादेश के अलावा अन्य पड़ोसी देश भी भारत के प्रति विश्वास वाला रवैया नहीं रखते। इसे सुरक्षा परिषद की स्थायी सदस्यता के मामले में भारत की दावेदारी के लिहाज से भी देखा जाना चाहिए। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारत की जो छवि दागदार हुई, उसे दरकिनार भी कर दें तो सबसे अहम सवाल तो यही है कि मौजूदा केंद्रीय सरकार के समक्ष ऐसी कौन–सी परिस्थितियां थीं कि उसे अपने ही देश के लोगों की जासूसी करवानी पड़ी? हालांकि यह सभी जानते हैं कि भारत सरकार के पास अपना तंत्र भी है, जिसके जरिए वह ऐसे लोगों की निगरानी करती है, जिनके बारे में उसे किसी तरह का अंदेशा होता है। फोन टैपिंग के कई मामले पहले भी प्रकाश में आते रहे हैं।

बहरहाल, यह भारतीय राजनीति में बदलाव का दौर है। सूचनाएं महत्वपूण होती जा रही हैं। बड़े से बड़े नेता को भी प्रशांत किशोर जैसे चुनावी प्रबंधक की आवश्यकता हो रही है। चुनाव आते ही बड़ी संख्या में ऐसी कंपनियां सामने आती हैं, जो मतदाताओं के नंबर राजनीतिक दलों को उपलब्ध करवाती हैं। फिर इन नंबरों का उपयोग उन तक अपने विचारों को सीधे पहुंचाने के लिए किया जाता है। सोशल मीडिया के विभिन्न मंचों का दुरु पयोग भी होता है। लेकिन सबसे अहम है सूचनाओं पर विदेशी संस्थाओं का कब्जा। कहना पड़ेगा कि सूचनाओं के मामले में भारत विदेशी कंपनियों का उपनिवेश बनता जा रहा है ।

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारत की जो छवि दागदार हुई, उसे दरकिनार भी कर दें तो सबसे अहम सवाल तो यही है कि मौजूदा केंद्र सरकार के समक्ष ऐसी कौन–सी परिस्थितियां थीं कि उसे अपने ही देश के लोगों की जासूसी करवानी पड़ी? हालांकि यह सभी जानते हैं कि भारत सरकार के पास अपना तंत्र भी है, जिसके जरिए वह ऐसे लोगों की निगरानी करती है, जिनके । बारे में उसे किसी तरह का अंदेशा होता है ।

Live हिन्दुस्तान .com

Date:22-07-21

ऐसे कड़े कानूनों से मुक्ति कब

यशोवर्द्धन आजाद, (पूर्व आईपीएस अधिकारी)

प्रासंगिकता और खुलेआम दुरुपयोग के तीखे आरोपों के बीच भारत के प्रधान न्यायाधीश भी आखिरकार राजद्रोह कानून के खिलाफ कोरस में शामिल हो गए। विधि आयोग पहले ही इस मुद्दे पर विचार-विमर्श कर चुका है और इसे हटाने की सिफारिश भी। यहां तक कि समाज के कई वर्गों, गैर-सरकारी संगठनों, पत्रकारों और वकीलों ने भी राजनीतिक मकसद से इस कानून के बेजा इस्तेमाल को बेपरदा किया है।

फिर भी, मामला जस का तस ठहरा हुआ दिख रहा है। सरकार पिघलने को कतई तैयार नहीं है। ऐसे मामलों को दर्ज करने को लेकर न कोई नया दिशा-निर्देश जारी किया गया है और न ही इस विषय पर पुलिस महानिदेशकों (डीजीपी) के सालाना सम्मेलन में कोई चर्चा हुई है। इस बीच, आंकड़े काफी स्याह तस्वीर पेश करते हैं- साल 2019 में राजद्रोह कानून के तहत 96 लोगों को गिरफ्तार किया गया था, लेकिन दो ही दोषी साबित हो सके। इसी तरह, गैरकानूनी गतिविधियां (रोकथाम) अधिनियम (यूएपीए) के तहत 2016 से 2019 तक 5,922 लोगों की गिरफ्तारियां हुईं, लेकिन सिर्फ 132 का दोष साबित हो सका, यानी महज 2.2 फीसदी की शोचनीय दर।

आखिर यह क्रूरता क्यों कायम है, इसको समझने के लिए आपराधिक न्याय प्रणाली के मुख्य कर्ता-धर्ताओं की भूमिका को जानना प्रासंगिक होगा। इनमें पहला नाम है, पुलिस का। यह इन धाराओं के तहत प्रथम सूचना रिपोर्ट (एफआईआर) दर्ज करती है और मामले की जांच करती है। दूसरा है अभियोजन पक्ष, जो पुलिस से स्वतंत्र होता है और अदालत में सरकार की तरफ से मुकदमों की पैरवी करता है। और तीसरा कर्ता-धर्ता है, न्यायपालिका, जो फैसला सुनाती है।

राजद्रोह या यूएपीए के तहत मामला दर्ज करते समय तीन स्थितियों में इनका दुरुपयोग किया जाता है। पहली स्थिति, जब जांच अधिकारी इसका इस्तेमाल अपराध की गंभीरता को बढ़ाने व अपने वरिष्ठ अफसरों का ध्यान खींचने के लिए करता है। दूसरी, जब अपने उच्च अधिकारियों या 'ऊपर' से आदेश मिलने पर वह ऐसा करता है। और तीसरी स्थिति, जब वह स्वयं इन कानूनों का इस्तेमाल इस विश्वास के साथ करता है कि इसके लिए उसे अपने उच्चाधिकारियों से स्वीकृति मिल जाएगी।

इसकी प्रासंगिकता जांचने का कोई व्यवस्थित तरीका क्यों नहीं है? दरअसल, अपने यहां डीएसपी, एसपी, डीआईजी से लेकर आईजी तक सुपरविजन करने वाले अधिकारियों के इतने पदानुक्रम हैं कि सभी इसे अनदेखा करना पसंद करते हैं। विशेष मामले तो पदानुक्रम में ऊपर जाते वक्त कई साप्ताहिक या पाक्षिक रिपोर्टों में दिखाई देते हैं। मगर शायद ही कभी इन धाराओं की एफआईआर को वापस लेने की बात कोई अधिकारी करता है। यहां तक कि डीजीपी और गृह सचिव भी ऐसे मामलों से वाकिफ होने के बावजूद आंखें मूंदे रखना पसंद करते हैं, और मुख्य सचिव भी।

जहां तक माननीयों का सवाल है, तो गृह मंत्री (केंद्र और राज्य, दोनों में) विधायिका में अपने महकमे का बचाव करते हुए 'लोकतंत्र की हत्या' के आरोपों का जवाब देते हैं, जिसके बाद प्रचार विभाग के निदेशक एक अच्छी तरह से तैयार सरकारी पत्र जारी करते हैं, जो इस तरह के अपराधों से उत्पन्न गंभीर खतरे को बताता है।

अब बात अभियोजन पक्ष की। आमतौर पर यही माना जाता है कि अभियोजक पुलिस को ठोस कानूनी आधार पर मामले को दर्ज करने की सलाह देते हैं, लेकिन दंड प्रक्रिया संहिता (सीआरपीसी), 1973 में अभियोजक को पुलिस से अलग कर दिया गया और उसे एक अलग इकाई का रूप दिया गया। अब हर राज्य में गृह मंत्रालय में अभियोजन निदेशालय होता है। सन 1973 से पहले, वरिष्ठ अधिकारी महत्वपूर्ण मामलों में अभियोजक से सलाह इसलिए लिया करते थे, ताकि अदालत में जब आरोप-पत्र दायर हो, तो आरोपी को दोषी साबित करने के सभी तत्व उसमें मौजूद हों। मगर अब अभियोजक पुलिस का नहीं, बल्कि राज्य का प्रतिनिधित्व करते हैं। लेकिन यदि कोई अभियोजक राज्य के लिए मामले की पैरवी करता है, तब भला वहकैसे इन धाराओं के तहत गलत तरीके से आरोपित व्यक्ति पर मुकदमा चला सकता है और ऐसे मामले को अदालत की नजर में नहीं लाता? अभियोजक की इस दुविधा को दूर करने की जरूरत है। वह राज्य की ओर से न्यायाधीश के सामने एक ऐसे मामले की पैरवी करता हुआ दिखाई देता है, जिसमें वह स्वयं उसकी सच्चाई को लेकर आश्वस्त नहीं होता। जाहिर है, अभियोजक की भूमिका पर तमाम पक्षों द्वारा विचार-विमर्श किए जाने की दरकार है।

अब न्यायपालिका की चर्चा। 1870 में बने राजद्रोह कानून में लगभग हर उन गतिविधियों और शब्दों, वक्तव्यों या लेखन को शामिल किया गया था, जो जाहिर तौर पर सरकार को बदनाम कर सकते हैं, इसीलिए अति उत्साही पुलिस अधिकारी या राज्य को इसके दुरुपयोग का एक बड़ा मौका मिल जाता था। बाद में, अदालतों ने इस कमी को स्वीकार करते हुए अपने आदेशों में इसकी सीमा परिभाषित की। 1962 के केदारनाथ मामले में तो सर्वोच्च न्यायालय ने कहा भी कि सरकार के कामकाज से नाखुश होकर की गई टिप्पणी चाहे कितनी भी कठोर हो, यदि उससे हिंसा होने या हिंसक कृत्य के लिए उकसाने का खतरा न हो, तो उसे राजद्रोह में शामिल न किया जाए।

ऐसे हर मामले की एफआईआर कॉपी मजिस्ट्रेट के पास जाती है और पुलिस द्वारा पेश चार्जशीट को परखने के बाद ही जज आरोप तय करते हैं। अगर पहली नजर में ही मामला सच नहीं दिखता, तो जज इन धाराओं के तहत आरोप तय क्यों करते हैं? आखिरकार, दिल्ली हाईकोर्ट ने यूएपीए के तहत गिरफ्तार दो एक्टिविस्ट को यही कहते हुए जमानत दी थी कि पहली नजर में कोई मामला नहीं बनता। स्टेन स्वामी मामले में भी, उनकी गिरफ्तारी के बाद, राष्ट्रीय जांच एजेंसी ने उन्हें हिरासत में लेने की मांग तक नहीं की।

तो फिर बिल्ली के गले में घंटी कौन बांधेगा? शासन इन कानूनों के इस्तेमाल करने की अपनी ताकत नहीं खोना चाहेगा, और शीर्ष पुलिस अधिकारी व वरिष्ठ नौकरशाह मुखर होने को इच्छुक नहीं दिखते। अभियोजन पक्ष भी गृह मंत्रालय का एक कमजोर अंग है। इस तरह, उम्मीद अब न्यायाधीशों से ही है कि वे यूएपीए की सीमा को फिर से परिभाषित करेंगे और राजद्रोह कानून खत्म करेंगे, क्योंकि ये दोनों लोकतंत्र पर धब्बा हैं।